की बाधा नहीं पड़ती; वह नित्य-निरन्तर दिन में चौबीस घण्टे शत प्रतिशत श्रीभगवान् द्वारा बताए कर्म के परायण रहता है। ऐसे कृष्णभावना-परायण भक्त पर प्रभु अतिशय कृपा करते हैं। कोई भी कठिनाई क्यों न आए, अन्त में वह दिव्य धाम—कृष्णलोक को प्राप्त हो ही जाता है। वहाँ उसका प्रवेश निश्चित है, कोई सन्देह नहीं। उस परम धाम में कोई विकार नहीं, वहाँ सभी कुछ सच्चिदानन्दमय है।

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः।
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव।।५७।।

चेतसा=कर्तापन के अभिमान आदि से रहित चित्त द्वारा; **सर्वकर्माणि**=सम्पूर्ण कर्मों को; **मयि**=मुझ में; **संन्यस्य**=अपर्ण करके; **मत्परः**=मेरे परायण; **बुद्धियोगम्**=भक्तियोग की क्रियाओं का; **उपाश्रित्य**=आश्रय लेकर; **मच्चित्तः**=मेरे स्मरण में लीन; **सततम्**=दिन में चौबीस घण्टे निरन्तर; **भव**=हो।

अनुवाद

चित्त से सम्पूर्ण कर्मों को मेरे अर्पण करके मेरे परायण और भक्तियोग के आश्रित हुआ निरन्तर मेरा स्मरण करने वाला हो।।५७।।

तात्पर्य

जो कृष्णभावनाभावित कर्म करता है, वह अपने को संसार का स्वामी नहीं समझता। भक्तियोग के लिए आवश्यक है कि सेवक के समान पूर्ण रूप से श्रीभगवान् की आज्ञा के आधीन हुआ कर्म करे। सेवक को कोई निजी स्वतन्त्रता नहीं होती; वह केवल स्वामी की आज्ञा का पालन कर सकता है। सबके स्वामी श्रीभगवान् के लिए कार्यशील सेवक को लाभ-हानि से कोई सरोकार नहीं, वह तो बस उनकी आज्ञा के अनुसार अपना कर्तव्य-पालन करता है। इस पर यह तर्क उठ सकता है कि अर्जुन तो साक्षात् श्रीकृष्ण के मार्गदर्शन में कर्म कर रहा है, दूसरा उनकी अनुपस्थिति में कर्म कैसे करे? यदि कोई श्रीकृष्ण के इस गीतोपदेश और श्रीकृष्ण के प्रतिनिधि के आज्ञानुसार कर्म करे, तो उसे अर्जुन के समान ही फल की प्राप्ति होगी। इस श्लोक में **मत्पर** शब्द का गूढ़ार्थ है। इससे यह संकेत है कि कृष्णभावनाभावित कर्म में श्रीकृष्ण को प्रसन्न करने के अतिरिक्त जीवन का कोई अन्य लक्ष्य नहीं हो सकता। इस विधि से कर्म करते हुए श्रीकृष्ण के इस चिन्तन में सदा विभोर रहना चाहिए कि ''मैं यह कर्म श्रीकृष्ण के लिए कर रहा हूँ, उन्होंने ही मुझे इसमें नियुक्त किया है।'' इस प्रकार कर्म करते हुए स्वाभाविक रूप से निरन्तर श्रीकृष्ण का स्मरण बना रहता है। यही पूर्ण कृष्णभावना है। परन्तु यह जान लेना चाहिए कि स्वेच्छाचार करके फिर उसका फल श्रीभगवान् को अर्पण नहीं करना चाहिए। ऐसा कर्म कृष्णभावनाभावित भक्तियोग नहीं है। श्रीकृष्ण की आज्ञानुसार ही कर्म करना चाहिए; यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। श्रीकृष्ण का वह आदेश परम्परा के द्वारा प्रामाणिक सद्गुरु से मिलता है। अतः गुरु-आज्ञा को जीवन का परम कर्तव्य बना लेना चाहिए। यदि किसी भाग्यवान् को सद्गुरु की प्राप्ति हो जाय और वह उनकी आज्ञा के अनुसार